ध्यान से ज्ञान दीपक ! प्रज्वलन आत्म साधना

यह जगत सारा क्षणिक है, और आत्मा एक नित्य है।

आत्मा का अनुभव, बस एक मात्र नित्य है।।

चैतन्य स्वभावी भगवान आत्मा अनादि-अनंत शुध्द चैतन्य मात्र है, ज्ञान मात्र है। मैं शुध्द चैतन्य मात्र, ज्ञान मात्र, भगवान आत्मा हूँ। तीन लोक के किसी भी प्रदेश पर रहकर भी, मैं चैतन्य प्रदेशों पर ही स्थित हूँ। मैं देहरुपी राख की दीवार का पडोसी चैतन्य परमात्मा हूँ। मैं अपने चैतन्य महल की ज्ञान की खिडकी से मेरी पडोसन राख की दीवार को मात्र जानता-देखता हूँ। राख की दीवार के माता-पिता-भाई-बहन-पुत्र-पुत्री-परिवारजन अत्यंत दूरवर्ती हैं। धन का ढेर धुल की दीवार, महल मिट्टी की दीवार, देह राख की दीवार और रिश्ते कांच की दीवार हैं। इन दीवारों से बना संसाररुपी हवा महल अपनापन करने योग्य नहीं। चैतन्य रस के घनपिंड में परद्रव्य तो दूर, परभाव को भी प्रवेश करने के लिये अवकाश नहीं है। प्रशंसक और निंदक की वाणी तो दूर, वाणी के विकल्प भी मुझमें प्रवेश नहीं कर सकते। ज्ञान जानता है, वह झुकता नहीं है और राग झुकता है, वह जानता नहीं है। रागादि विकल्प रुपी वैतरणी अधोलोक में बहती है, चैतन्य मध्यलोक में ज्ञान की गंगा ही बहती है। चैतन्य सत्ता रागादि विकल्प एवं देह की क्रिया करने नहीं जाती, इसलिये रागादि विकल्प एवं देह की क्रिया का कर्ता नहीं। मैं चैतन्य सत्ता मात्र हूँ।

यदि बचपन से कोई मुझे नहीं कहता कि मैं जैन हूँ या हिन्दु हूँ, तो भी मेरा अस्तित्व होता या नहीं? यही मेरा असली स्वरुप है। मैं मिथ्याज्ञानी भी नहीं हूँ, सम्यग्ज्ञानी भी नहीं हूँ। शिष्य भी नहीं हूँ, गुरु भी नहीं हूँ। गृहस्थ भी नहीं हूँ, मुनि भी नहीं हूँ। संसारी भी नहीं हूँ, मुक्त भी नहीं हूँ। मैं चैतन्य सत्ता मात्र शुध्दात्मा ही हूँ। पत्नी आँगन तक, समाज स्मशान तक, पुत्र अग्निदाह तक और शुभाशुभकर्म भव-भवांतर तक साथ देंगे, परम पारिणामिकभाव ही मेरे साथ अनादि-अनंत रहता है, मैं स्वयं परम पारिणामिकभाव स्वरुप हूँ। अनादि से जल से दीपक जलाना चाहा, पर जल न सका। इन्द्रिय विषयभोगों से सुख मिल न सका। प्रतिकूलता में परमात्मा की याद आती है, यदि अनुकूलता में भी खालीपन का एहसास हो, तो उस खाली स्थान में परमात्मा का वास हो सकता है। तीन लोक की सम्पदा के संयोग और वियोग में भी मैं चैतन्य सत्ता मात्र परिपूर्ण परमात्मा हूँ। मैं मांस नहीं हूँ, हड्डी नहीं हूँ, खून नहीं हूँ, चमडी नहीं हूँ। मांस, हड्डी, खून, चमडी आदि पदार्थो का पिंड देह मैं नहीं हूँ। कर्मोदय से नाचने वाली देहरुपी कठपुतली मैं नहीं हूँ, परन्तु कठपुतली को जानने-देखने वाला शुध्दात्मा हूँ। बिमारी में राख की दीवार से भले ही लावारस बहे, शुध्दात्मा में तो ज्ञानरस ही झरता है। पेट में भोजन न हो तो वमन, दस्त, कब्ज, नहीं होता। कैसी होगी वह दशा, जब सिध्दावस्था में पेट नहीं, बल्कि आधि-व्याधि-उपाधि का निमित्त देह ही नहीं रहेगा? सिध्दावस्था से भी महान मैं त्रिकाल सिध्द परमात्मा हूँ। मैं देहप्रमाण नहीं, ज्ञानप्रमाण हूँ। आत्मानुभूति की पर्याय में भी प्रवेश नहीं करने वाला शुध्दात्म द्रव्य, यही मैं हूँ। मैं ध्यान करने वाला नहीं हूँ, ध्यान का ध्येय चैतन्य तत्त्व हूँ। ज्ञेयों से ज्ञान होता नहीं, इन्द्रियों से ज्ञान होता नहीं, ज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशम से ज्ञान होता नहीं, विकल्प से ज्ञान होता नहीं, ज्ञान की तत्समय की पर्याय की योग्यता से ज्ञान होता है, ज्ञान की अवस्था में ज्ञान ही है, ज्ञेय नहीं। वह ज्ञान की अवस्था भी मैं नहीं हूँ। जाननेरुप प्रवाह में व्याप्त सामान्य, अखण्ड, एक, अभेद भगवान आत्मा, यही मैं हूँ। आनंद से परिपूर्ण चैतन्य के प्रदेश जहाँ है, दु:ख के प्रदेश वहाँ नहीं है। मैं आनंद भवन में विराजमान रहकर परिणमित जगत को मात्र जानता हूँ। मैं त्रिकाल आनंद भवन ही हूँ। मैं त्रिकाल प्रज्वलित ज्ञान दीपक ही हूँ।

ॐ-ॐ-ॐ